ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 6, June 2017

वेदो में समाज कल्याण की अवधारणा

डॉ. कामना सहाय

सह- आचार्य, (संस्कृत), स. ध. राज. महाविद्यालय, ब्यावर, राजस्थान, भारत

सार

वैदिक ग्रंथों में भारतीय समाज की अवधारणा स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है और वेदों में भारत राष्ट्र की महिमागान के साथ ही राष्ट्र के कल्याण की कामना की गई है। वैदिक ग्रंथों के अध्ययन से इस सत्य का सत्यापन होता है कि राष्ट्र की अवधारणा भी वेदों, विशेषकर ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में व्यक्त है। सहस्त्राब्दियों से ऋग्वेद के अनेक मंत्र हमारी मातृभूमि तथा संस्कृति के गुणों और महत्त्व की प्रेरणा देते आए हैं और आज भी ये मंत्र अत्यंत प्रासंगिक तथा उपयोगी हैं. पुरातन भारतीय परंपरानुसार जिस प्रकार एक जीवात्मा का निवास एक शरीर में होता है और परमात्मा का निवास इस विशाल ब्रह्मांड में है, ठीक उसी प्रकार देश एक शरीर है तो राष्ट्र उसकी आत्मा है। देश भौतिक तत्व है, दृश्यमान है, स्थूल है, जबकि राष्ट्र अदृश्य है, सूक्ष्म है, दिखता नहीं है। देश सभ्यता है तो राष्ट्र समाज संस्कृति है। देश भौतिक है तो राष्ट्र एक आध्यात्मिक विचार है। देश को आध्यात्मिक विचारों से अथवा सांस्कृतिक मूल्यों से ही महान बनाया जा सकता है। भारत कभी विश्वगुरू था तो केवल अपने उत्तुंग राष्ट्रीय आध्यात्मिक भावों के कारण ही था। वैदिक ग्रंथों में भारतीय राष्ट्र की अवधारणा स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है और वेदों में भारत राष्ट्र समाज की महिमागान के साथ ही राष्ट्र के कल्याण की कामना की गई है। वैदिक ग्रंथों के अध्ययन से इस सत्य का सत्यापन होता है कि राष्ट्र की अवधारणा भी वेदों, विशेषकर ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में व्यक्त है। सहस्त्राब्दियों से ऋग्वेद के अनेक मंत्र हमारी मातृभूमि तथा संस्कृति के गुणों और महत्व की प्रेरणा देते आए हैं और आज भी ये मंत्र अत्यंत प्रासंगिक तथा उपयोगी हैं। विश्व का सर्वाधिक प्राचीन परमेश्वरोक्त ग्रंथ ऋग्वेद इसकी पुष्टि करता है

परिचय

श्रेष्ठं यविष्ट भारताग्ने द्युमन्तमा भर।

वसो पुरुस्पृहं रयिम ॥ ऋग्वेद 2.7.1

अर्थात भारत वह देश है जहां के ऊर्जावान युवा सब विद्याओं में अग्नि के समान तेजस्वी विद्वान हैं, सब का भला करने वाले हैं, सुखी हैं और जिन्हें ऋषिगण उपदेश देते हैं कि वे कल्याणमयी, विवेकशील तथा सर्वप्रिय लक्ष्मी को धारण करें। वैदिक परंपरा में ब्राह्मण के लिए लक्ष्मी ज्ञान है, क्षत्रिय के लिए बल है, वैश्य के लिए धन है और शूद्र के लिए सेवा है।1,2] ऋग्वेद में ही कहा है:

त्वं नो असि भारताग्नेवशाभिरुक्षाभिरू।

अष्टापदीभिराहुतरू ॥ ऋग्वेद 2.7.5

अर्थात भारत समाज में सभी विषयों में अग्नि के समान तेजस्वी विद्वान गायों तथा बैलों के द्वारा खेती कर समृद्ध तथा सुखी हैं और आठ सत्यासत्य निर्धारक नियमों द्वारा संचालित जीवन जीते हैं। ऋग्वेद 6.16.45 में ऋषि प्रार्थना करते हैं कि हे सभी विषयों में अग्नि के समान तेजस्वी विद्वान! आप निरंतर उन्हें ज्ञान देते हो जो ज्ञानवान हैं, आप और अधिक ज्ञान प्राप्त कर उन्हें ज्ञान दीजिए। राष्ट्र कल्याण की कामना करते हुए ऋग्वेद में कहा है:

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 6, June 2017

तस्मा अग्निर्भारतरू शर्म यंसज्ज्योक्पश्यात्सूर्यमुच्चरन्तम।

य इंद्राय सुनवामेत्याह नरे नर्याय नृतमाय नृणाम ॥ ऋग्वेद 4.25.4

अर्थात सभी विषयों में अग्नि के समान तेजस्वी विद्वानों को धारण करने वाला भारत सभी मनुष्यों को घर के समान सुख दे और जो यह कहते हैं कि विद्यावान, उत्तम शीलवान मनुष्यों के मुखिया इंद्र कुशल तथा ऐश्वर्यवान समाज का निर्माण करें, वे बहुत काल तक सूर्योदय देखें। वेदों में ईश्वर से भारत, भारतीय व भारतवासियों की कल्याण की कामना की गई है। ऋग्वेद 6.16.19 में कहा है - हे अग्नि के समान तेजस्वी विद्वतजन, प्रकाश देने वाले, मेघ के द्वारा वर्षा कराने, भरण-पोषण करने वाले और मानव की चेतना जगाने वाले श्रेष्ठ स्वामी सूर्य की स्तुति करते हुए उनका हम सदुपयोग करें।[3,4] ऋग्वेद 3.53.12 में विश्वामित्र कहते हैं, हे मनुष्य! हम इंद्र की स्तुति करें जो अंतरिक्ष तथा पृथ्वी दोनों के द्वारा भारत में जन्म लेने वालों की रक्षा करता है। ऋग्वेद 3.23.2 के अनुसार, हे अग्नि! धारण कर्ता और पालन कर्ता और विद्वानों के वचनों के श्रोता और श्रेष्ठ प्रेरणाकारक से प्रेरित पुरुष अनुकूल दिवस पर श्रेष्ठ कौशल के द्वारा धन उत्पन्न करने वाली अग्नि को मंथन द्वारा उत्पन्न करें जो हम लोगों के लिए सुमार्ग में अग्रणी होवे, हे अग्नि, आप बहुल धन तथा अन्नादि की कृपादृष्टि रखें।[5,6]

भारतीले सरस्वति या वरू सर्वा उपब्रुवे।
ताताश्रिये॥ ऋग्वेद 1.188.8

अर्थात हे भारत माता समाज, हे धरती मां, हे सरस्वती, मैं प्रार्थना करता हूं कि आप हमें लक्ष्मी प्राप्त करने के लिए प्रेरणा दें। अर्थात हमें भारत माता, धरती मां और विद्या का सम्मान करते हुए धन कमाना है। ऋग्वेद 1.142.9 के अनुसार भारती, भारत माता अर्थात धारण पोषण करने वाली इला धरती तथा वाक्देवी सरस्वती शुद्ध, अमर और देवों को समर्पित यज्ञ का संपादन करने वाले अग्नि देव विशाल यज्ञ को सफल करें। अर्थात किसी भी महान कार्य को करने के लिए यह तीनों देवियां तथा ऊर्जा के देव अग्नि आवश्यक होते हैं। ऋग्वेद 2.1.11 के अनुसार, हे विद्या देने वाले विद्वान देव प्रकाशमान अग्ने! आप दानशील शिष्य के विकास के लिए अंतरिक्ष को प्रकाशित करने वाली सूर्य की माता अदिति के समान विद्या के गुणों को प्रकाशित करते हैं। ऋग्वेद 3.4.8 तथा ऋग्वेद 7.2.8 के अनुसार प्रबुद्ध, प्रवृद्ध तथा संस्कारित निस्वार्थ सेवा करने वाली भारती, भारत माता, दिव्य एवं विचारशील पुरुषों को निस्वार्थ संसाधन प्रदान करने वाली इला, पृथ्वी और अग्नि के समान तेजस्वी ज्ञान विज्ञानमय वाणी वाली सरस्वती, यह तीनों देवियां यहां के, भारत के वायुमंडल में उपलब्ध हैं। सभी मनुष्य इनका आश्रय[7,8]

लें। ऋग्वेद 3.62.3 में कहा है - हे
वज्रधारी इंद्र और हे ब्रह्माण्ड के नियंता वरुण, हमारे पास उचित धन हो, हे पवन देव मरुत, हम सब वीर और कुशल हों जो लक्ष्मी प्राप्त कर सकें।

भारती पवमानस्य सरस्वतीला मही।

इमं नो यज्ञमा गमन्तिस्रो देवीरू सुपेशसरू॥ ऋग्वेद 9.5.8

अर्थात हमारे सोम यज्ञ में उत्तम गुणों वाली तीन देवियां भारती, सरस्वती एवं महान इला सम्मिलित हों। ध्यातव्य हो कि ऋग्वेद में इन तीन देवियों भारत माता, ज्ञान और कार्य करने की जमीनी क्षमता की महिमा बार-बार गाई गई है। ऋग्वेद 10.110.8 के अनुसार हमारे यज्ञ में सूर्य की सी कांति वाली भारती और मनुष्य को ज्ञानी बनाने वाली इला और उत्तम ज्ञानदा सरस्वती शीघ्र आवें। तीनों उत्तम कार्य करने वाली, प्रकाश और ज्ञान देने वाली देवियां इस उत्तम आसन पर सुखपूर्वक विराजें। ऋग्वेद 1.22.10 में प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि हे कार्यकुशल विद्वान अग्ने! हमारी रक्षा करने के लिए कुल रक्षक देवियों को यहां ले आओ, हमें ऐसी वाणी, भारती दो जिससे हम देवों को बुला सकें एवं निष्ठापूर्वक सत्य भाषण कर सकें। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि ऋग्वेद में भारत, भारती अथवा भारतवासी के अनेक अर्थ हैं। वेदों का यह ज्ञान मनुष्य मात्र की एकता का आह्वान करता है, किंतु विभिन्न देशों की प्रतिद्वंद्विता तथा

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 6, June 2017

कुछ देशों के जीवन मूल्य इन भावनाओं के विपरीत होने के परिप्रेक्ष्य में इन्हें हमारे राष्ट्र की रक्षा के लिए अनिवार्य शिक्षा मानना चाहिए।[9,10]

विचार-विमर्श

वेद में नारियों को पूजनीय मानते हुए उन्हें परिवार का नेतृत्व सौंपा गया। वेद की शिक्षाओं से ओतप्रोत अनेक विदुषियों ने वैदिक धर्म की ध्वजा हाथ में लेकर समाज को आध्यात्मिकता और नैतिकता का पाठ पढ़ाया। वेदों ने मानव जीवन को सृष्टि का सर्वोच्च जीव तत्व बताया और इस बात की प्रेरणा दी कि अन्य जीवों के प्रति प्रेम और उदारता का भाव पैदा करे।ऋग्वेद और यजुर्वेद में हिंसा से दूर रहने के अनेक मंत्र हमें जीव तत्व के प्रति सहानुभूति का संदेश देते हैं। अथर्ववेद के संदेश 'सत्येन उत्भित्ता भूमि:' ने मानव जीवन में नैतिकता का मूल आधार सत्य को स्थापित किया और कहा कि सत्य ही पृथ्वी को धारण करता है। सत्य, अहिंसा, दया, दान जैसे अनेक नैतिक मूल्यों की स्थापना वेद ग्रंथों के माध्यम से की गई है।

वेदों में आंतरिक पूजा महत्वपूर्ण है, क्योंकि वेद की उत्पत्ति ही ध्यानावस्था रूपी आंतरिक पूजा का सुफल थी। ध्यानावस्था में अपने अंदर ईश्वर की ज्योति को प्रज्वलित करने के बाद बाहरी पूजा के रूप में ऋग्वेद के प्रथम मंत्र ने 'अग्नि मीले पुरोहितम' का संदेश देकर प्रेरित किया कि अंदर और बाहर हमें अग्नि की पूजा करनी है। बाहरी पूजा का उद्देश्य है पूरे समाज का कल्याण। इस प्रकार आध्यात्मिकता के साथ-साथ सामाजिकता की सुंदर रचना वेद के एक ही सूत्र से निकलती है। समाज की कल्याण रूपी पूजा ने यज्ञों का रूप धारण किया। इसलिए वेद द्वारा विकसित संस्कृति को 'याज्ञिक संस्कृति' के नाम से जाना जाता है। वेद में मानव जीवन को चार आश्रमों में बांटा गया- ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। ब्रह्मचर्य अवस्था में अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण रखते हुए ब्रह्म का ज्ञान और सांसारिक शिक्षाओं को प्राप्त करना शामिल था। गृहस्थ जीवन का उद्देश्य परिवार को धर्म और अर्थ से लाभान्वित करना था। काम माध्यम मात्र था। तीसरे व चौथे वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम के माध्यम से समाज सेवा के साथ-साथ अपनी आध्यात्मिक शक्तियों का विकास करते हुए मोक्ष की तरफ अग्रसर होने की प्रेरणाएं मिलती हैं। इस प्रकार चार आश्रमों ने मानव जीवन के चार उद्देश्यों को पूरा करने के मार्ग उपलब्ध कराए। वेद में वर्ण व्यवस्था का मुख्य उद्देश्य था कार्य विभाजन अर्थात ब्रह्म और अन्य शिक्षाओं का प्रचार करने वाला ब्राह्मण, शारीरिक और मानसिक बल के आधार पर लोगों की रक्षा करने वाला क्षत्रिय, अन्न और जीवन के लिए अन्य उपयोगी सामग्री को उपलब्ध कराने वाला व्यापारी वर्ग वैश्य और उपरोक्त समस्त शिक्षा और कलाओं से अनभिज्ञ व्यक्ति सेवा कार्यों में लगा शूद्र कहलाया। परंतु विदेशी शासकों के दौर में वैदिक काल की यह कर्म व्यवस्था जन्म पर आधारित मानी जाने लगी और भेदभाव का कारण बन गई।[11,12]

वास्तव में वेदों में वर्ण व्यवस्था के लिए जो कहा गया है, उसका सार यह भी है कि 'मानव-मानव एक समान, सब के भीतर है भगवान।' मूल रूप में सब एक हैं, कोई भी और किसी भी तरह का भेद नहीं है। 'ईशावास्यमिदं र्सव यत्किंच जगत्यां जगत' अर्थात् वही ईश्वर सब में समाया है।

वेद में संपूर्ण मानवता के कल्याण के उपदेश मिलते हैं। 'वसुधैव कुटुंबकम' के माध्यम से वेद समूची सृष्टि को एक वृहद परिवार मानते हैं। यह संयुक्त राष्ट्र संघ के लिए एक महान लक्ष्य बन सकता है, जिसके माध्यम से विश्व के समस्त कलह, क्लेश समाप्त हो सकते हैं। आधुनिक मानव को वेदों की उस कल्याणकारी शिक्षा की आवश्यकता है, जहां विज्ञान का प्रयोग विनाश के स्थान पर आध्यात्मिक शक्तियों का संवर्धन करने और सबका कल्याण करने की शिक्षा पर केंद्रित हो।

वेद का स्वास्थ्य विज्ञान एक ऐसे जीवन की कल्पना प्रस्तुत करता है, जहां व्यक्ति सदैव स्वस्थ रहे और कभी रोगी न हो। दुर्घटनावश प्राप्त शारीरिक विपत्तियों का उपचार भी प्रकृति प्रदत्त भोजन सामग्री से ही संभव हो सकता है। वेद समूची सृष्टि के ग्रह-उपग्रहों के साथ-साथ सूर्य की अग्नि, वायु, जल आदि तत्वों के माध्यम से अनेक वैज्ञानिक क्रियाओं का सूत्र भी उपलब्ध कराते हैं। मनोविज्ञान से लेकर कृषि और मौसम की जानकारियों के सूत्र भी वेदों से प्राप्त किए जाते रहे हैं।[10]

वैदिक गणित तो आधुनिक मानव को भी आश्चर्यचकित कर देता है। इस प्रकार वेद व्यक्ति को एक स्वावलंबी इन्सान बनाकर सुख एवं समृद्धि का स्थायी आधार उपलब्ध कराने में सक्षम है। परमार्थ निकेतन आश्रम में हमने वेद के स्वाध्याय और अनुसंधान का

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 6, June 2017

कार्यक्रम संचालित किया है, जिसमें विश्व के अनेक देशों के श्रद्धालु महानुभाव भाग ले रहे हैं। वेद का उचित लाभ आधुनिक युग को तभी मिल सकता है, जब उच्चशिक्षित वैज्ञानिक समुदाय वेद मंत्रों को गहराई से समझे और उन सूत्रों से मानव समुदाय को अपने जीवन और आध्यात्मिक शक्तियों पर स्वाभिमान के योग्य बना दे।[1,2]

परिणाम

वेदों मे निर्माण वाद की बात को 'सोम' नामक देवता के द्वारा सिद्ध किया गया है। सोम को स्फूर्ति (God of Inspiration) का देवता माना गया है सोम देवता को ही वनस्पति - जगत् की अधिपति, सर्वशक्तिमान, पूर्णतः नीरोग करने वाला और अमरत्व प्रदान करने वाला माना है इसी प्रकार विष्णु, सूर्य, उषा, अग्नि, पूषा इत्यादि देवताओं को भी जगत के विभिन्न तत्वों व वस्तुओं का उत्पतिकत्रा बताया गया है।

यही से दर्शन के प्रति ऋषियों की जिज्ञासा को ओर बढ़ावा मिलने लगा। मुख्य शब्दः वेद, देवता, सर्वशक्तिमान, निर्माण, पूर्णतः इत्यादि।

वेद केवल भारतवर्ष के लिये ही नही अपितु समुचे विश्व मे मानव मात्र के लिये आदरणीय है। वेदो से ही धर्म की संस्थापना हुई **"वेदों ऽखिलो धर्ममूलम्"** किन्तुः मूलतः विश्व का कल्याण, समूचे मानव जाति के उन्नयन, शुभ संस्कारो के प्रवर्तन, ज्ञान की विभिन्न विधाओं के निर्देशन वेदो से ही अवतरित हुये है। भक्ति और कर्म के त्यागमय समर्पण के कारण वेद मानव-धर्म की प्रतिष्ठा करते है।

'विद्' धातु से ज्ञान अर्थ मे घन्न' प्रत्यय लगाकर 'वेद' शब्द बनता है। विद् धातु के चार अर्थ होते है –

ज्ञान, सता, लाभ, और विचारण।

जिसके द्वारा सभी विधाओं को जानता है, प्राप्त करता है, विचार करता है और विद्वान होता है (विद् ज्ञाने, विद् सतायाम्, विद् लाभे, विद् विचारणे) विश्व स्तर पर विद्वाना ने वेद का सर्वमान्य अर्थ अज्ञान से ज्ञान की ओर से ले जाने वाली शक्ति के रूप मे माना है। जो कि विद्यावाचक है, केवल ज्ञान है।

डॉ. राधाकृष्णन् के अनुसार "वेद मनुष्य के धार्मिक और दार्शनिक विचारो का मानव भाषा मे प्रथम परिचय प्रस्तुत करता है। प्राचीनतम इतिहास सामाजिक नियम, सदाचार, दर्शन, कला, धर्म आदि ज्ञान का आधार वेद है।

वेद मे उस सत्य का वर्णन है जिसका दर्शन सबसे प्रथम भारतवर्ष के मनीषियों व ऋषियों को हुआ था इसीलिये उन्होने भी इसे "श्रुति" कहा है इसमे लौकिक एव अलौकिक ज्ञान भरा हुआ है। वेदों से दर्शन का सर्वप्रथम प्रार्दुभाव हुआ है क्योंकि सृष्टि की रचना के बारे मे यदि कोई प्रमाण मिलता है; तो वह वेद मे है। ऋग्वेद के 'नासदीय सूक्त' मे निर्गुण ब्रह्म का वर्णन मिलता है जिसकी मूलसता से सबकुछ उत्पन्न हुआ है, जो समस्त वस्तुओं मे विद्यमान है उसे न सत् कहा जा सकता है न असत्। इस मंत्र मे कहा भी गया है।[3,4]

"नासदासीतो सदासीत तदानीं नासीद्रजो ना व्योमा परा यत्"

अर्थात् जो कुछ है सो पहले नही था जो कुछ नही है सो भी नही था न पृथ्वी थी, न आकाश था न उसके परे स्वर्ग लोक था।

इस मंत्र से यह ज्ञात होता है कि सृष्टि पूर्व उस ब्रह्म से पूर्व कुछ नही था केवल वह था जो सब मे विद्यमान था। इसी लिए विद्वानों ने सृष्टि के आधार के प्रारम्भ से ही उत्पति की जिज्ञासा रखने वाले इस सूक्त को दार्शनिक सूक्तों की श्रेणी मे रखा है। वेदों में अन्य सूक्तों मे भी जगत् ज्ञान होता है कही यह भी वर्णन मिलता है कि सोम से पृथ्वी, आकाश, दिन, रात, जल आदि की उत्पति मानी गई है।

देवताओं की संख्या अनेक रहने के कारण वैदिक काल के लोगों के सामने यह प्रश्न उठता है कि कौन से देवता को श्रेष्ठ मानकर आराधना की जाए?

Copyright to IJIRSET

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 6, June 2017

“ कस्मैः देवाय हविषा विधेम् ”

अर्थात् किस देवता को नमन किया जाए? धार्मिक चेतना एक ही देवता को श्रेष्ठ मानकर उसकी उपासना करने को बाध्य करती है परन्तु यहां पर तो जिस देवता की स्तुति की जाती है वही सबसे परम है सर्वशक्तिमान है कभी इन्द्र तो कभी वरूण, कभी विष्णु तो कभी अग्नि, कभी ऊषा तो कभी पूषा इन्ही नामों को अलग-अलग कहकर सभी को ईश्वर कहकर स्तुति की जाती है।

मैक्समूलर ने वैदिक धर्म को अनेकेश्वरवाद कहना ठीक नही समझा इन्होने एक नये शब्द का प्रयोग किया है, हिनाथीज्म (Henotheism) इसी विचारधारा ने वेदों मे दार्शनिक क्रमिक निर्माण को जन्म दिया। पहले अनेकेश्वरवाद (Polytheism) से प्रारम्भ कर हिनाथीज्म (Henotheism) होते हुए अंत मे एकेश्वरवाद (Menotheism) पर पहुंच गया। वेद का एक प्रसिद्ध मंत्र एकेश्वरवाद की ओर संकेत करता है---

“ एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति ”
अग्निर्यमं मातरिश्वानमाहुः !

अर्थात् एक ही सत् है, विद्वान लोग उसे अनेक मानते है कोई उसे अग्नि, कोई उसे यम या कोई वायु या कुछ विद्वान उसे ब्रह्म कहते है।

वेदों मे मन की गति के सबसे तीव्र माना है। मन ही सभी इन्द्रियों का नियन्त्रक भी है अभिचारक भी यदि मन पर व्यक्ति का अंकुश है, तो सम्पूर्ण परा शक्ति से वह साक्षात्कार कर सकता है, इस लिये वेदों में मन को दृढ़ संकल्पित करने की प्रार्थना की गई है।

यजाग्रतों दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवेति।
दूर ›. म ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिव सं ड ल्पमस्तु।।

वेदान्त दर्शन में कठोपनिषद् एक रथ के दृष्टान्त द्वारा मानव व्यक्तित्व का वर्णन करता है इस उपनिषद द्वारा “हमारा शरीर रथ है और बुद्धि सारथी है मन लगाम है, जिससे कर्मेन्द्रियाँ व ज्ञानेन्द्रियाँ जुड़ी हुई है, ये ज्ञानेन्द्रियाँ व्यक्ति को संसार का ज्ञान देने वाली मानों पांच वातायन है, भोग्य विषय रूपी सड़क पर यह रथ चल रहा है। जो व्यक्ति इस देह व मन के साथ तादात्मय का बोध करता है उसे विषयों का कर्मफलों का भोक्ता कहा गया है।[5,6]

व्यक्तित्व निर्माण से जुड़ी मन की अन्य महत्वपूर्ण क्रिया है हमारी भावनाएं। ये भावनाएं जितनी ही संयमित होगी, व्यक्ति का व्यक्तित्व भी उतना ही स्वास्थ होगा। व्यक्तित्व को सुन्दर बनाने में वेदों के मंत्रों में कामनाओं के साथ-साथ महत्वपूर्ण आयामों को भी लक्षित किया गया है। ऋषियों के अनुसार व्यक्तित्व निर्माण में जो तथ्य है वह इस प्रकार हैः

कोई भी समाज, देश व राष्ट्र सार्वजनिक तथा सर्वहितकारी भावनाओं को त्यागकर स्वार्थपरायण हो जाता है तभी उसमें असत्य, अविश्वास, छल-कपट, भ्रष्टाचार, पारस्परिक वैमनस्य, अशान्ति तथा उन्तमाद जनित बलात्कार आदि भावनाएं विकसित हो जाती हैं। इन सबका मूल कारण चरित्रगत हीनता है। वेद उदात चरित्र वाले मानवों के निर्माण का सन्देश देताहै –

“ चरित्रांस्ते शुन्धामि। ”

तुम्हारे चरित्र शुद्ध हों। शुद्ध चरित्र वाले का व्यवहार भी शुभ होता है। उसकी सदैव कामना होती है -

“ भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ”

हम उच्चता के भावों से युक्त हों, अतः स्वस्थ एवं निर्दोष जीवन, दीर्घ जीवन की प्राप्ति के लिए कानों से भद्र सुनें, आँखों से सदैव भद्र ही देखें। समस्त इन्द्रियाँ भद्रभाव से युक्त हों, इसके लिए मन की शुद्धता, पवित्रता आवश्यक है। चरित्रवान् व्यक्ति ही उच्च स्वर में घोषणा कर सकता है -

“ परोऽपेहि मनस्पाप किमशस्तानि शंससि।
परेहि न त्वा कामये वृक्षान् वनानि संचर।
गृहेषु गोषु मे मनः। ”

IJIRSET

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 6, June 2017

हे मेरे मन की पाप भावना! तू दूर जा। मैं निन्दनीय कर्म की प्रवृत्ति तेरे कहने से भी अपने अन्दर नहीं रखूंगा। मैं तुझे नहीं चाहता। तू वृक्षों वनों में विचरण कर। मैं अपने मन को घर की समृद्धि में और गौओं की सेवा में लगाऊँगा।

“ आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः। ”

चरित्रहीन व्यक्ति को ज्ञान भी पवित्र नहीं करते हैं अर्थात् आचार (चरित्र) के बिना ज्ञान का कोई महत्व नहीं रह जाता है।

इस संसार में समग्र सफलताएँ आत्म-विश्वास की भावना से प्राप्त होती हैं। आत्म हीनता पतन है।[7]

“ अहमिन्द्रो न पराजिग्य इद्ध न मृत्यवेऽवतस्थे कदाचन। ”

मैं इन्द्र शक्ति सम्पन्न तथा ऐश्वर्य सम्पन्न हूं। मैं अपनी श्रेष्ठता में कभी पराजित नहीं होता। मृत्यु भी मेरी श्रेष्ठता को छीनने में असमर्थ है। यह आत्म-विश्वास का भाव स्वयं को पुष्ट करने से प्राप्त होता है। इसके लिए किसी के सहारे की आवश्यकता नहीं है-

स्वयं वाजिंस्तन्वं कल्पयस्व स्वयं यजस्व स्वयं जुषस्व।
“ महिमा ते अन्येन न सन्नशे। ”

हे बल और ज्ञान से सम्पन्न मनुष्य ! तू अपने शरीर को समर्थ बना, स्वयं उत्तम कर्म कर-स्वयं सामथ्र्यशाली बन। तेरे आत्म-विश्वास की महिमा को अन्य कोई नष्ट नहीं कर सकता। आत्म-हीनता की भावना कायरता है। अतः वेद आत्म-विश्वास के भाव को इन शब्दों में प्रबुद्ध करता है, जगाता है, उत्पन्न करता है-

“ शुक्रोऽसि भाजोऽसि स्वरसि ज्योतिरसि।
आप्नुहि श्रेयांसमति समं क्राम। ”

हे मनुष्य, तू शूद्ध है, तेजस्वी है, आनन्दमय है, ज्योतिमान् है। तू आत्म-विश्वास के साथ (अपने से) श्रेष्ठों तक बढ़, समान लोगों से आगे बढ़।

“ भद्रं नो अपि वातय मनो दक्षमुत क्रतुम् । ”

सत्य ही हममें आत्म विश्वास इतना हो कि मेरे श्रेष्ठ चरित्र, कार्य एवं व्यवहार के कारण चारों दिशाएँ मेरे आगे झुक जायें अर्थात् सब ओर से मेरा जीवन सफल हो।

जीवन की प्रगति दिव्य एवं उच्च भावनाओं से होतीहै। वेद की विशेषता यह है कि वर्ग, सम्प्रदाय, ऊँच-नीच आदि भावनाओं से परे होकर यह दिव्य भावनाओं के जागरण का उत्तम सन्देश देता है।[8]

“ यो जागार तमृचः कामयन्ते।
यो जागार तमु सामानि यन्ति।। ”

अर्थात् जो जागता है - दिव्य भावनाओं से भरा रहता है उसी को प्रशंसा प्राप्त होती हैं।जो जागता है उसे शान्ति प्राप्त होती है। जो व्यक्ति केवल स्वयं दिव्य भावों से भरा रहता है, किन्तु दूसरों को उन भावों से संयुक्त नहीं करता है, ऐसा व्यक्ति स्वार्थी है, अज्ञानी है-

मज्जन्त्यविचेतसः।

अज्ञानी, असावधान, एवं स्वार्थी व्यक्ति डूब जाते हैं। अतः वेद सावधान करता हुआ बोध देता हैं-

“ उचिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवान् यज्ञेन बोधय। ”

हे दिव्य विचारों से संयुक्त देव। उठो, सावधान होकर अन्य लोगों को भी अपने यज्ञमय = परोपकारमय जीवन से जागरूकता का सन्देश दो। वेद का सन्देश निराश जीवनों में आशा के दिव्य भावों का स× चार कर देता है, ऊँचा उठने का उत्साह भर देता है-

वेद का दिव्य भावों के प्रति यह सन्देश कितना उत्साहवर्धक है-

“ अहमिन्द्रों न पराजिग्ये इद्धनं न मृत्यवेऽवतस्थे कदाचन। ”

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 6, June 2017

मैं इन्द्र हूँ, मैं शक्तिशाली हूँ, ऐश्वर्यशाली हूँ। मैं अपनी धन्यता को कभी हार नहीं सकता। यह दिव्य भाव मेरा धन है, इस धन को मुझसे कोई छीन नहीं सकता, मृत्यु सामने हों तो भी मेरे दिव्य भाव समाप्त नहीं होंगे।

जो दिव्य भावनाओं से भरा होता है वह निरन्तर आगे बढ़ता है, उसके प्रगति पथ को कोई अवरूद्ध नहीं कर सकता है -

" न वा उ मां वृजने वारयन्ते न पर्वतासो यदहं मनस्ये। "

जब दिव्य भावों से भरा रहता हूं तो संसार की कोई शक्ति मेरे ऊध्र्वगमन मार्ग को नहीं रोक सकती, उन्नति की ओर अग्रसर होने से मुझे नहीं रोक सकती, पर्वत भी ऐसे व्यक्ति के मार्ग को नहीं रोक सकते हैं। ऐसे ही दिव्य भाव सदा हममें जागृत हों।[9]

निष्कर्ष

वैदिक विचारधारा का लोप होने के कारण मानव के अन्दर आत्म-निरीक्षण करने का अभाव हुआ। वह मात्र दूसरों के दोष देखने, सुनने व खोजने में लगा रहता है, इससे मानव का, मानवीय गुणों के निर्माण का ह्रास हो गया। वैदिक विचारों वाला व्यक्ति तो प्रभु से प्रार्थना करता है -

" विश्वानि देव सवित र्दुरितानि परासुव। "

सम्पूर्ण मंत्र में दुर्गुणों को दूर कर दने की प्रार्थना है। अथर्ववेद में भी दोषों को दूर करने की प्रार्थना इन शब्दों में की गई है -

बुरे स्वप्न = बुरी वासनाएँ, दुष्ट जीवन, आसुरी वृत्तियाँ, दरिद्रता तथा निन्दनीय वाणी को हम अपने से दूर करते हैं।[10]

" प्रत्युष्टं रक्षः प्रत्युष्टा अरातयः।
निष्टप्तं रक्षो निष्टप्ता अरातयः। "

हे मनुष्य! तू आत्म-निरीक्षण कर अपने अन्दर की राक्षसी वृत्तियों को दग्ध कर दे, स्वार्थ वृत्तियों को भस्म कर दे, राक्षसी वृत्तियों को जलाकर निःशेष कर दें, स्वार्थ वृत्तियों को भस्म करके समाप्त कर दे। मनुष्य को आत्म-निरीक्षण करके देखना चाहिए कि कहीं उसमें उल्लू के समान मोहवृति, भेड़िये के समान क्रोधवृत्ति, कुत्ते के समान ईष्र्यावृत्ति, चक्रवाक के समान कामवृति, गरूड़ की चाल के समान मद्वृत्ति तथा गिद्ध जैसी लोभवृति तो नहीं वास कर रही है, यदि कर रही हो तो उसे ऐसे नष्ट कर देना चाहिए जैसे पत्थर से किसी वस्तु को चूर कर दिया जाता है -

" उलूकयातुं शूशलूकयातुं जहि श्वयातुमुतकोकयातुम्।
सुपर्णयातुमुत गृध्रयातुं दृषदेव प्र मृण रक्ष इन्द्र।। "

इस आत्म निरीक्षण के भाव से हम सच्चे मनुष्य बनेंगे एवं संसार के कल्याण के लिए दिव्यजन को उत्पन्न कर सकेंगे –[11]

वर्तमान जीवन विलासिता का जीवन हो गया है, धन की अधिकता में मनुष्य दुव्र्यसनों में डूबता जा रहा है, शरीर जो प्रगति का सोपान था, रोगों का घर बनता जा रहा है। शरीर साधन है आत्म-बोध का, शरीर साधन है मोक्ष प्राप्ति का। ऐसे

शरीर को महत्व देकर उसकी उपेक्षा करना, दुव्र्यसनों के पंक में फंस कर उसे क्षीण करना या काम क्रोधादि भावों से उसे कलंकित करना उचित नहीं है। केनोपनिषद का वचन है -

" इह चेदवेदींदथ सत्यमस्ति न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः। "

यदि इस मानव देह द्वारा उद्देश्य को (आनन्द, परमानन्द, मोक्ष को) प्राप्त कर लिया तो सत्य हैं, नहीं प्राप्त किया तो महान् विनाश है। व्यक्ति को सदैव इस शरीर को स्वस्थ रखना चाहिए -

" लोकं पृण छिद्रं पृणायो सीद ध्रुवा त्वम् । "

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 6, June 2017

हे मनुष्य ! तू अपने शरीर को दोषों से , दुर्गुणों और दुव्र्यसनों से रहित करके इस शरीर में स्थिरता पूर्वक निवास कर। मानव का यह शरीर उपेक्षा के लिए नहीं अपितु

" उत्क्राम महते सौभगाय यजुर्वेद "

महान् , महत्वपूर्ण सौभाग्य - ऐश्वर्य , प्राप्त करने के लिए प्राप्त हुआ है। इस शरीर को पुष्ट करने की आवश्यकता है -

" घृतेन त्वं तन्वं वर्धयस्व। "

घृतादि पुष्टिकारक पदार्थो से अपने शरीर को पुष्ट करना चाहिए।

हे मनुष्य ! तेरा शरीर पत्थर के समान दृढ़ हो अर्थात् कष्टों को सहन करने की सामथ्र्य तेरे अन्दर उत्पन्न हो। अग्नि , वायु , जल , पृथिवी आदि दिव्य शक्तियाँ तेरी आयु की वृद्धि करें।[12]

वेद त्यागपूर्वक भोग का उपदेश देता है। यह संसार परमेश्वर द्वारा निर्मित , धारित और पोषित है , वही इसका स्वामी है। संसार में भोग के लिये जो कुछ भी चराचर पदार्थ दृष्टिगोचर होते हैं , उनका सब का दाता वही परमेश्वर है। हमारा कुछ भी नहीं , अतः यजुर्वेद का आदेश है कि , " तेन व्यक्तेन भु × जीथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम्। " अर्थात ईश्वर - प्रदत्त वस्तुओं का त्यापूर्वक भोग करो। किसी के धन का लालच मत करो। परिश्रम से जो धन प्राप्त हुआ है , उसी को बहुत मानकर सन्तोष करना चाहिए

" वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः " ।

ऋग्वेद का कथन है कि उस व्यक्ति का धन और अन्न व्यर्थ है जो उसका दान नहीं करता , दूसरे को , नहीं खिलाता। अकेला खाने वाला कृपण व्यक्ति वस्तुतः मृत्यु को निमन्त्रण देता है। उस बचाये हुए धन , अन्न से न तो स्वयं की स्मृद्धि होती है न मित्र की। अकेला खाने वाला पाप को खाता है -

" मोधमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत् स तस्य।
नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादिः।। "

इसी की पुष्टि गीता करती है

" भु × जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् "

वे पापी तो वस्तुतः पाप को खाते हैं जो अपने लिये पकाते हैं , स्वयं के लिये जीते हैं। अत एव तैत्तिरीय उपनिषद् का उपदेश है श्रद्धापूर्वक , अथवा बिना श्रद्धा के लाज शरम से , अथवा ईश्वर के भय से , दान अवश्य करना चाहिये। श्रद्धया देयम्। अश्रद्धया देयम्। हिया देयम्। भिया देयम्।।[13]

वेदों में मानव - निर्माण को आधार रख कर भूत - भविष्यत् वर्तमान सम्बन्धी सम्पूर्ण ज्ञान को बहुत सरल ढंग से कहा गया है

" भूतं भव्यं भविष्यच्च सर्वं वेदात् प्रसिध्यति "

वेदों में सब कर्तव्यों कर्मो का प्रतिपादन किया गया है क्योंकि वेद सम्पूर्ण ज्ञान का कोष है। भौतिक आवश्यकताओं के साथ - साथ आध्यात्मिक ज्ञान का कोष वेद है वेद की विशेषता यह है कि वह ईसाई , मुसलमान , बौद्ध जैन , सिक्ख आदि बनने का उपदेश नहीं देता है। उसका संसार के समस्त मानवों के लिए समान उपदेश है। मनुष्य बनो।

" मनुर्भव जनया दैव्यं जनम् " ।

मुक्ति को प्राप्त करना ही मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य माना जाता है यह सम्पूर्ण व्यक्तित्व की पूर्णता के बिना अधूरा है। वेदों में सृष्टि की उत्पति से मोक्ष तक एकेश्वर से बहु ईश्वर की भांति से पुनः अखण्ड ब्रह्म को पुनः प्राप्त करने का ज्ञान छिपा है। प्रकृति एवं माया इसी ब्रह्म के माया जाल है , जिनका आक्षेप किए बिना व्यक्ति ज्ञान को प्राप्त नही कर सकता। यह माया केवल तभी तक जीव को प्रभावित करती है जब तक जीव का ब्रह्म से साक्षात्कार नही हो जाता , वेदों में इसी लिए मन का संकल्पित करके कल्याणकारी होने की बात कही गई है। मन की कल्याणकारी दृढ़ संकल्प शक्ति ही मनुष्य को ब्रह्म से मिलाने मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जिस प्रकार सर्प केंचुली उतार फेंकने के बाद

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 6, June 2017

उससे कोई मोह नही रहता, उसी प्रकार जीवनमुक्त को भी अपने शरीर व विषयों से मोह नही रह जाता। सम्पूर्ण व्यक्तित्व के प्रगाढ़ हो जाने पर सत् और असत् श्रेय और प्रेय के अन्तर का ज्ञान ही विवेक है। विवेक ही मोक्ष की ब्रह्म अनुभूति कराने वाला है। इस अनुभूति के बाद ब्रह्म के साक्षात्कार होने पर स्वयं उसमे वह अंश मिल जाता है और ब्रह्म हो जाता है।[14]

संदर्भ

1. अथर्ववेद संहिता : शास्त्री, राम राजा, पं. लाहौर, 1931
2. इंडियन फिलास्फी : राधाकृष्णन, डॉ. मोतीलाल बनारसीदास, 1986 ।
3. ऋग्वेद संहिता : सम्पादक विश्वबन्धु, विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान, साधु आश्रम, होशियारपुर, सं. 2016
4. ऐतरेय ब्राह्मण : मालवीय, सुधाकर, डॉ. कमच्छा, वाराणसी, 1976
5. कठोपनिषद् : बरूखा, सं. अनुन्दोराय कलकता, 1975
6. जैमिनीय ब्राह्मण : रघुवीर, आचार्य, मोतीलाल बनारसीदास, 1976
7. मनुस्मृति : शर्मा, रामचन्द्र वी., डॉ. केन्द्रिय संस्कृत विद्यापीठं
8. महाभारत : सम्पादक विश्वबन्धु, विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान, साधु आश्रम, होशियारपुर, सं. 2016
9. वशिष्ठ स्मृति : भार्गव, दीवान, भूषण प्रेस, वाराणसी, 1957
10. वैदिक सूक्त संग्रह : गीता प्रेस, गोरखपुर, 2012
11. वैदिक वाड्.मय : संस्कृति सदन, कोटा
12. यर्जुवेद : त्रिवेदी, कुमार राजेन्द्र, डॉ. परिमल पब्लिकेशन्ज, दिल्ली, 1983
13. शुक्ल यर्जुवेद : सिंह, उदय नारायण, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1960
14. श्रीमद्भगवद्गीता : गीता प्रेस, गोरखपुर